अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

नाट्यगीतों का तात्त्विक विवेचन

डॉ॰ अर्चना गौड़
एसोसिएट प्रोफ़ेसरए
हिंदी विभागए रामलाल आनंद कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

षजिस दिन किसी बालक ने खेल–खेल में किसी अन्य व्यक्ति की कल्पना की! उस दिन से आज तक यह कला निरंतर विकसित होती जा रही है।ष[प] नाट्य कला के लिए यह कहना समुचित ही है क्योंकि नाट्य–कला वर्ग–विशेष के लिए नहीं है यह तो वह कला है जो पुरुषए स्त्रीए वृद्धए बालकए बालिका सभी के लिए है। इसको समझने तथा इसके उद्देश्य को आत्मसात् करने के लिए मस्तिष्क से अधिक हृदय की आवश्यकता होती है। बालक की यह कल्पना भाव से ही संबंद्ध है। यहाँ बालक के षमैंष पर दूसरे का षपरष हावी हो गया। इसी प्रकार नाटक में भी दर्शक–वर्ग रंगमंच पर होने वाली क्रिया–व्यापार को देखकर अपने षमैंष को भूल दूसरे के षपरष से जुड़ जाता है। नाटक की वह कला है जो अपनी मिश्रित कला के द्वारा किसी एक की बात न करके संपूर्ण समाज की भावनाओं को प्रदर्शित करती है। डॉ॰ सीताराम झा श्याम के शब्दों में – षनाटक एक मिश्रित कला है। इसलिए नाट्यकर्ता एवं नाट्य प्रयोक्ता के लिए विविध कलाओं का ज्ञाता होना आवश्यक माना गया है।ष[पप]

मिश्रित कला से अर्थ यहाँ नाट्य संरचना के विभिन्न अंगों व उपांगों से है जैसे – अभिनयए नृत्यए संगीतए गीतए चित्रकलाए स्थापत्य कलाए ध्वनि–योजनाए प्रकाश–योजना आदि। नाटक की प्रस्तुति के लिए इन सभी कलाओं के एकाकार होने की आवश्यकता क्यों पड़ीघ् नाटक कविता पढ़ने वाले पाठक के मात्र चक्षु या हृदय को प्रभावित नहीं करता या संगीत प्रेमी के कर्ण तथा हृदय को प्रभावित नहीं करता या संगीत प्रेमी के कर्ण तथा हृदय तक सीमित नहीं रहता या सुंदर चित्र की भाँति मात्र नेत्रों से हृदय पर अपने सौंदर्य का अंकन नहीं करता। नाटक मानव की संपूर्ण इंद्रियों को प्रभावित करता हैए सभी को उद्वेलित करता है। दर्शक यदि नेत्र बंद कर लें तो आनंद पूर्ति नहीं होगीए यदि कान बंद कर लें तो आनंद में बाधा होगी। अतः निस्संदेह जो विधा मानव की सभी इंद्रियों को प्रभावित करे वह अधिक सशक्त भावना–प्रधानए अधिक संप्रेषणीय व अधिक विचार संपन्न होगी। आचार्य रामचंद्र गुणचंद्र के अनुसार – षजो गीतए वाद्यए नृत्य आदि नहीं जानते और जो लोक व्यवहार में कुशल नहीं वे नाटक लिखने एवं अभिनीत करने के अधिकारी नहीं माने जा सकते।ष[पपप]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

यहाँ आलोचक का आशय षगीतए वाद्यए नृत्यष से यदि भावनाओं से लें और लोक-व्यवहार का अर्थ व्यावहारिकता से लें तो यह स्पष्ट होता है कि भावनाओं को प्रदर्शित करने वाला साधन है गीतए वाद्य और नृत्य।

नाटक में कभी-कभी ऐसी स्थिति आती है जब भावनाओं की लहरें अति तीव्र होती हैं और इन भावनाओं के ज्वार-भाटा को मात्र गीतों के बांध में ही बांधा जा सकता है। जब नाटक के पात्र कभी आनंदातिरेक से भावुक हो जाते हैं तो कभी दुःखातिरेक उन्हें भाव-विभोर कर देता है ऐसी स्थिति में तो गीत स्वतः जन्म ले लेता है। अतः गीतों की रचना कोई भी रचनाकार सप्रयास नहीं करता अपितु यह तो नाटक की मांग होती है जो स्थिति विशेष के कारण जन्म लेती है। रघुवरदयाल वार्ष्णेय का इस विषय में यह मत है कि - ष्जहाँ नाटक का पात्रए वहीं लेखक की कल्पना और जहाँ कल्पना वहीं भाव संपन्नता तथा इसी भाव संपन्नता के साथ गीत।ष्पअ

ये गीत स्वतः अवतरित होते हैं लेकिन निरुद्देश्य नहीं होते। नाटककार जब इनकी रचना करता है तो वह इसे संदर्भ से जोड़ते हुएए घटनाक्रम से जोड़ते हुएए पात्रों की मानसिकता से जोड़ते हुएए समय व वातावरण से जोड़ते हुए उद्धृत करता है। यद्यपि गीतों की परंपरा बहुत पुरानी हैए काव्य ही गीत है और काव्य की उत्पत्ति सर्वविदित है। दृश्य-काव्य द्वारा ही नाटक की उत्पत्ति हुई है। सभी पुराने आचार्यों ने काव्य के अभाव में नाटक की कल्पना हो ही नहीं सकतीए ऐसा कहा हैए अरस्तु ने भी काव्य को नाटक का अभिन्न अंग माना है। भारत में पुराने समय से ही काव्य और नाटक को समान अर्थ में ही देखा गया है। प्राचीन ग्रीक कवि और भारतीय कालिदास ने नाटकीय अभिव्यक्ति के लिए कविता का ही चयन किया है। उन्होंने इसलिए पद्य का सहारा लियाय क्योंकि जीवन के गंभीर और भावपूर्ण विषय पद्य में अधिक सुचारू रूप से अभिव्यक्ति पाते हैं। एंबर कांम्बे के अनुसार - षाद्य में जीवन के केवल बाह्य अनुभव का चित्रांकन संभव हैए जबकि काव्य में जीवन के किसी आंतरिक सत्य की ओर संकेत किया जाता है।ष

गद्य में भावाभिव्यक्ति की वह क्षमता नहीं जो पद्य में है। गीत व्यक्तिपरक होते हैंए इनमें भावों का उन्माद होता हैए आशा या निराशा के झूले में झूलते हुए विचारों का मनोविकार होता है। ये जीवन से उत्पन्न होते हैंए अतः जीवन के अधिक निकट होते हैं और अधिक सजीव होते हैं। अपनी सजीवता के कारण ही अधिक प्रभावोत्पादक होते हैं। अरस्तु ने कविताए संगीत और नृत्य को नाटक के ही सृजक अंग स्वीकार किए। ये सभी उपसाधन लयबद्ध होकर जीवन का ही अनुकरण करते हैं। कवि उस जीवन का अनुकरण नहीं करताए बल्कि ऐसे जीवन का अनुकरण करता हैए जो जैसा थाए जैसा है और जैसा हो सकता है। अरस्तु के इन विचारों के आधार पर हम कह

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

सकते हैं कि जीवन के यथार्थ को समझने की शक्ति यदि कवि में है तो उसे प्रदर्शित करने की क्षमता मात्र कविता में है। जीवन के यथार्थ को मात्र गीत से ही जोड़ा जा सकता है और नाटक यथार्थ की ही अनुकृति है। अतः गीत और नाटक एक दूसरे के पूरक एवं अभिन्न अंग हैं। नाटक में गीत अनिवार्य हैए क्योंकि पद्य या काव्य में भावाभिव्यक्ति की वह क्षमता है जो कि गद्य में नहींए किंतु क्या नाटक में गीतों की आवश्यकता है या नाटकों में मात्र भावाभिव्यक्ति की दुहाई देकर गीतों को नाटक में आरोपित किया जाता रहा है। इसका उत्तर हमें हरिकृष्ण ष्प्रेमीष् ने नाट्य-साहित्य में गीतों की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए इस प्रकार दिया है - ष्इस युग के कलाकार चाहते हैं कि नाटकों में गीत न दिए जाएं। यदि रंगमंच या चित्रपट का ध्यान न हो तो नाटकों से गीतों को निर्वासित किया जा सकता है। रस-सृष्टि में संगीत बहुत सहायक सिद्ध होता है। आलोचक कहते हैं कि वास्तविक जगत् में गाने वाले पात्र नहीं मिलतेए पात्रों से गीत गवाना अस्वाभाविक बात है। यह ठीक है कि नाटक का प्रत्येक पात्र गायक नहीं हो सकताए न प्रत्येक स्थान गीतों के लिए उपयुक्त हो सकता हैए फिर भी नाटक में दो-एक पात्र में दो-एक पात्र ऐसे रखे जा सकते हैं जो नाटक की स्वाभाविकता को नष्ट न करते हों। गीत कथानक के अनुकूल हो और जो रसए जो वातावरणए जो प्रभाव लेखक उत्पन्न करना चाहता हैए उसको गहरा करने वाला हो।ष[अ]

यूँ तो हिंदी साहित्य में गीतों की पृष्ठभूमि अत्यंत प्राचीन है और कितने ही लंबे गीतए तत्सम शब्दावली के गीतए महाकाव्य मिल जाएँगे लेकिन हमारा अभिप्रेत न तो लंबे गीतों से हैए न ही गीति-नाट्य या काव्य-नाटक से है। यहाँ पर चर्चा है नाटक में प्रयोग किए जाने वाले गीतों की। ये गीत यदि अपनी सीमा बांधकर नाटक में अवतरित हों तो नाटक के सौंदर्य को चाद चाँद लगा सकते हैं। किंतु यदि ये नाटक सीमा का उल्लंघन कर दें तो नाटक में बोझिलता पैदा कर सकते है। ष्अति सर्वत्र वर्जयते।ष यह नियम नाटक में गीतों पर भी लागू होता है। इस प्रकार नाटक में गीतों का प्रयोग नाटककार को तोलकर करना पड़ता है इन गीतों का नाटक के प्रत्येक तत्त्व से अंतर्संबंध अनिवार्य है।

यदि नाटक कथानक के अनुरूप नहीं होंगे तो वह रेशम में टाट के पैबंद के समान प्रतीत होंगे। गीतों में संगीत के तत्त्व की प्रधानता होनी चाहिए क्योंकि गीत और संगीत अभिन्न रूप से जुड़े हैं। गीत यदि अत्यंत सुंदर हों और लयात्मकता उसके अनुकूल न हो तो तुकबंदी से जुड़ा गीत दर्शकों को मोहित न कर पाएगा। गीत का संक्षिप्त होना भी आवश्यक हैए ऐसा न हो कि गीत इतना लंबा हो जाए कि वह दर्शकों के लिए लोरी का कार्य करेए नाटक में एकरसता पैदा कर दे। गीत

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

की भाषा में नाटककार क्लिष्ट भाषा का प्रयोग कर अपने पांडित्य का प्रदर्शन करे तो अच्छा है क्योंकि उससे गीत की संप्रेषणीयता समाप्त होती है। गीत का वातावरण के अनुकूल होना तथा मनोरंजक होना अनिवार्य है। नाटक में प्रयुक्त नाट्य-गीतों के महत्त्वपूर्ण तत्त्व इस प्रकार स्वीकार करते हैं:

नाट्य गीत के तत्त्व

1ण संगीतात्मकता

2ण संक्षिप्तता

3ण प्रभावी-सौंदर्य

4ण भावनात्मक बोध

5ण अनुभूति-सौंदर्य

संगीतात्मकता

हम पहले भी सिद्ध कर चुके हैं कि नाटक में संगीत का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। नाटक में नाटककार जिन गीतों को रखे वे लयबद्धए छंदबद्ध होने आवश्यक हैं। गद्य रूप में चल रहे नाटक में जब गीत का प्रदर्शन होता है तो दर्शक के मस्तिष्क को मानो स्फूर्ति प्राप्त हो जाती है क्योंकि गीत में छिपे संगीत की शक्ति अतुलनीय हैए वह दर्शक के मानस को एक ओर स्फूर्ति प्रदान करता हैए वही दूसरी ओर सहृदय के हृदय में रस का संचार करने में भी सक्षम होता है। डॉ॰ रामेश्वर प्रसाद द्विवेदी ने गीत में संगीत के महत्त्व को इस प्रकार दर्शाया है - षगीत वह काव्य है जिसकी आत्मा अंतर्निहित संगीत से युक्त अपने स्रष्टा की हृदयानुभूतियों का सहज विस्फोट हो और जिसका कलेवर अपनी रचना में किसी नियम का अनुगामी न होकर भी इतना सुगठित एवं स्वस्थ हो कि भाव के आकलन व विकास में स्वतः समर्थ बने रहकर रसानुभूति करा सके।ष[अप]

संक्षिप्तता

नाटक में प्रयुक्त गीतों का एक अनिवार्य तत्त्व है संक्षिप्तता। नाटक के गीत इतने लंबे न हों कि वे उद्देश्य से भटक जाएं। गीतों में नाटक में समाहित करने का मूल उद्देश्य है नाटक के अभिप्रेत को प्रभावोत्पादक रूप से दर्शकों तक पहुंचाना। यदि नाट्य-गीत अत्यधिक लंबा होगा तो निस्संदेह वह नाटक के सौंदर्य पर खरा नहीं उतरेगा और भटकाव की स्थिति पैदा करेगाए जिससे तारतम्य समाप्त होने का ख़तरा निरंतर बना रहेगा। गीत से अर्थ थोड़े शब्दों में अधिक की अभिव्यक्ति है और नाटक में तो विशेष रूप से यह एक अनिवार्य है। अधिक लंबे गीत नाटक के सौंदर्य को भी

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

नष्ट कर सकते हैं। छोटे गीत एक ओर जहाँ अपने उद्देश्य की पूर्ति करते हैं वहीं अधिक संप्रेषण-शक्ति लेकर उत्पन्न होते हैं। नाटक में सभी कलाओं का समावेश होता है इसीलिए आवश्यक है कि सभी कलाओं के सौंदर्य को ध्यान में रखा जाए। ध्रुवस्वामिनी की रचना तक आते-आते प्रसाद जैसे महान नाटककार भी गीतों के विषय में यह कहते हैं - ष्गीत योजना वहीं तक उचित है जहाँ तक कथा-भाग अवरुद्ध न हो। कथा का विकास भी होता रहेए पाठक या दर्शक भी न ऊबे तथा गीत भी चलते रहेंए तभी नाटक सफल माना जाएगा।ष[अपप]

प्रभावी-सौंदर्य

गीत नाटककार की गहनतम अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है। अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में सौंदर्य का सर्वप्रथम स्थान है।उतना किसी अन्य विधा या कला का नहीं। सौंदर्य द्वारा कवि अपने गीत से सहृदय को रसासिक्त करता है। कवि अपने गीत में सौंदर्य को विभिन्न विधानों द्वारा व्यक्त करता है। कवि अपने हृदय के सुकुमार मधुमयी माधुर्ययुक्त भाव-सुमनों को सूक्ष्म परिकल्पना के सूत्र में बहुत कुशलता से गूंथकर इतनी सुंदर सुगंधित रसयुक्त गीतमाला बनाकर सहृदयों को पहनाता है कि उसे पहनकर कई सहृदय ससम्मान सुखानुभव प्राप्त करते हैं। अतः नाटक के गीतों की विशेषता प्रभावी-सौंदर्य है जो भावए जो अनुभूति वह रस के धागे में पिरोकर माला बनाता है उसकी सुगंध का प्रभाव सहृदय तक पहुँचना अनिवार्य है अन्यथा गीत की उपस्थिति नाटक में नगण्य हो जाएगी। दर्शक के भावों को प्रभावित करने के लिए गीत में अत्यंत प्रभावी गुण होने चाहिए। आचार्य शुक्ल ने भाव की परिभाषा इस प्रकार दी है - ष्प्रत्यक्ष बोधए अनुभूति और वेगयुक्त प्रकृति इन तीनों के गूढ़ संश्लेषण का नाम ष्भावष है।ष[अपपप]

गीतों में जहाँ नाटक के उद्देश्य का प्रत्यक्ष बोध होना अनिवार्य हैए वहीं अनुभूति का होना भी आवश्यक है। कथानक के प्रत्यक्ष बोध तथा अनुभूति के साथ-साथ भावों का तीव्र वेग भी होना अनिवार्य है जिसके मिलने से गीतों में प्रभाव उत्पन्न करने का गुण पैदा होगा। भाव में केवल सहृदयता ही नहीं होतीए मार्मिकता और विदग्धता भी होती हैए इन्हीं मार्मिक भावों को उत्पन्न करने के लिए गीत का प्रभावी होना अनिवार्य है जिससे भावक अपनी रस-सामग्री की खोज आसानी से कर सके।

भावनात्मक बोध

शब्दे वेवाश्रिता शक्तिः विश्वस्यास्यनिबन्धनी।
यन्नेत्रः प्रतिभात्मायं भेदरूपः प्रतायते।।[पग]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

शब्द संसार को एक सूत्र में बाँधने वाली शक्ति हैए ऐसा स्वीकारा गया है। वाणी अथवा भाषा मनुष्य की भावाभिवयक्ति का अधिक समर्थ एवं विलक्षण साधन है। नाटक में भाषा से अर्थ है ष्साधनष् वह दर्शकों व नाटककार के मध्य एक सेतु का कार्य करती है जिसके द्वारा दर्शक नाटककार के विचारों व भावों को प्राप्त करता है। डॉ॰ लक्ष्मीनारायण भारद्वाज के शब्दों में - ष्नाटक में भाषा मात्र साधन है अतः उसके सरल अथवा क्लिष्ट प्रारूपों का विवाद महत्त्वपूर्ण नहीं है।ष्ग जिस प्रकार से नाटक में भाषा साधन मात्र है उसी प्रकार गीतों का प्रयोजन भी मात्र विचारों का आदान-प्रदान नहीं है। भाषा भावों की वाहिनी है। अंतःप्रेरणा और प्रज्ञा भाषा के माध्यम से ही स्वरूप धारण करती है। विषय जितना गूढ़ होए भाषा उतनी सहज और सरल होनी चाहिए ताकि दर्शक-गण भावों को हृदयंगम कर सकें। अमूर्त मनोविकारों को मूर्तरूप में चित्रित करना नाट्यकार की क्षमता पर निर्भर करता है। अतः नाटककार को इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि भाषा भावों के साथ थिरकने लगे। गीत की भाषा इतनी सक्षम होनी चाहिए कि उसके द्वारा अंतः व बाह्य दोनों ही मनोदशाओं का सुंदर वर्णन हो सके। गीत की भाषा आत्माभिव्यक्ति तथा अभिनय व्यापार दोनों में पूर्ण सहायक सिद्ध होनी चाहिए।

अनुभूति-सौंदर्य

नाटक का ध्येय पूर्ण रूप से नाटककार के विचारों व भावों को सहृदय तक पहुँचाना है। उसका अत्यंत मुख्य और महत्त्वपूर्ण तत्त्व है अनुभूति-सौंदर्य अर्थात् नाटककार द्वारा गीत में गूंथे गए भावों व विचारों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से सहृदय तक संप्रेषित करना। यह तभी हो सकेगा जब गीत में स्वाभाविक रूप से अनुभूति तत्त्व विद्यमान होगा। रंगमंच में प्रयुक्त गीत से अभिप्राय ऐसे गीत से है जो साहित्यिक जगत के गीत न होकरए रंगमंच पर अभिनीत नाट्य-गीत हैए जिनके अभिप्रेत को सहृदय मंचित होने पर सहज प्राप्त कर लेता है। नाटक में काव्य की स्थिति सहज ही उत्पन्न होती हैए नाटक काव्य में रम्य माना गया हैए लोकप्रिय स्वीकारा गया है। उसकी रम्यता तो उसकी अभिनेयता एवं चाक्षुष-बिंब योजना में है। गीत में ये चाक्षुष-बिंब योजना यद्यपि नहीं होती किंतु नाट्य-गीतों में यह बिंब योजना अनिवार्य है क्योंकि रंगमंच पर अभिनीत गीत को दर्शक मात्र कानों से सुनकर आत्मसात् नहीं करता अपितु नेत्रों का भी इसमें पूर्ण योगदान होता है। इसलिए नाटक में समाहित गीत में अनुभूति-सौंदर्य की दृष्टि से अभिनेयता के साथ-साथ चाक्षुष बिंब योजना का होना अनिवार्य है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 6.789 Volume 10-Issue 1, (January-March 2022

संदर्भ

i Drama could spring from the play of a child who imagines, for the time being that he is someone else – *The Development of Dramatic Act*, 1928 by Donald clive Stuart, Prof. of Dramatic Art, Princetion University, Page 1

ii डॉ॰ सीताराम झा श्याम, नाटक और रंगमंच, पृष्ठ-8

iii वही, पृष्ठ-9

iv डॉ॰ गोविंद चातक, ध्रुवस्वामिनी – विचार और विश्लेषण, नि॰ गीत-योजना, वार्ष्णेय, पृष्ठ-79

v पुकार, विषपान, पृष्ठ-12

vi हिंदी गीतिकाव्य, (अप्रकाशित शोध प्रबंध), पृष्ठ-16

vii संपा॰ डॉ॰ गोविंद चातक, डॉ॰ उर्मिला चातक, ध्रुवस्वामिनी : विचार और विश्लेषण, पृष्ठ-80

viii रसमीमांसा, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृष्ठ-168

ix भर्तृहरि, वाक्यपदीय, 1-122

x डॉ॰ लक्ष्मीनारायण भारद्वाज, नाट्यालोचना, पृष्ठ 298